जनसत्ता

आफत की बरसात

बिहार और उत्तर प्रदेश में बरसात ने जिस तरह का कहर ढाया है, वह किसी बड़ी प्राकृतिक आपदा से कम नहीं है। लेकिन देखने की जरूरत यह भी है कि ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए हमारी सरकारी व्यवस्था कितनी तैयारी करती है। बिजली गिरने, बाढ़ में डूबने, दीवार गिरने से लेकर करंट की चपेट में आने की वजह से उत्तर प्रदेश में अस्सी और बिहार में करीब तीस लोगों की मौतें और कई शहरों में पानी भर जाने से सड़क और रेल यातायात सहित बाकी जनजीवन ठप होने की स्थिति यह बताने के लिए काफी है कि विकास के नाम पर अच्छी सड़कों और ऊंची इमारतों का हवाला देने की हकीकत जमीन पर क्या है। पटना सहित उत्तर बिहार के कई जिलों में पिछले तीन-चार दिनों से लगातार हुई बारिश ने लोगों के सामने एक बड़ा संकट खड़ा कर दिया है। खासतौर पर पटना में हालत यह है कि मुख्य सड़कों से लेकर ज्यादातर मुहल्लों में तीन से पांच फुट पानी भर गया और भूतल पर रहने वालों को घर छोड़ना पड़ा। बाजारों और अस्पतालों तक में पानी घुस गया, बिजली और पानी की आपूर्ति में भी व्यापक बाधा आई है और एक तरह से भूखे-प्यासे रहने की हालत में पहुंचे लोगों को आपात मदद की जरूरत है।

आखिर बरसात की वजह से किसी शहर के डूबने की स्थिति क्यों पैदा हो जा रही है? पटना में एक बड़ा सवाल यह खड़ा हो गया है कि अगर बरसात पूरी तरह रुक भी जाती है तो गलियों-मुहल्लों में जमा पानी कैसे निकलेगा! फिलहाल मुख्य वजह यह है कि पटना से सटी गंगा, पुनपुन, गंडक और सोन नदियां पहले से ही खतरे के निशान से ऊपर बह रही हैं और शहर के नालों का पानी उनमें भी नहीं निकल पा रहा है। ऐसी स्थिति में सरकार के पास लोगों की सुरक्षा और उनका जीवन बचाने के क्या इंतजाम हैं? शहरी नियोजन में जल-निकासी की समुचित व्यवस्था एक सबसे अहम शर्त होनी चाहिए। लेकिन चारों तरफ ऊंची इमारतों का संजाल खड़ा हो जाता है, मगर इस पहलू पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा जाता कि बरसात या बाढ़ की हालत में पानी के निकलने का रास्ता क्या होगा। पटना में घनी आबादी वाले इलाकों में पहले ही पानी की निकासी की व्यवस्था को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। फिर आपदा प्रबंधन विभाग की तैयारी भी सवालों के घेरे में है।

भूकम्प या बाढ़ जैसी आपदाओं के बारे में हर बार कोई निश्चित पूर्वानुमान लगा पाना मुमकिन नहीं होता है, लेकिन इन्हें प्राकृतिक उथल-पुथल का एक अनिवार्य हिस्सा मान कर इनसे बचाव के इंतजाम करना अपने बस में जरूर होता है। पर यह शहरी जीवन के अभ्यास में नहीं होने का ही नतीजा है कि देश के किसी हिस्से में अचानक काफी ज्यादा बरसात हो जाती है और समूचा इलाका डूबने के कगार पर आ जाता है। हाल के वर्षों में मुंबई या चेन्नई जैसे महानगरों में भारी बारिश की वजह से जो हालत देखी गई, उसकी वजहें किसी से छिपी नहीं हैं। फिर भी देश के दूसरे इलाकों में सरकारें ऐसी तबाही को ध्यान में रख कर बचाव और राहत के दूसरे इंतजामों सहित जल-निकासी के पर्याप्त इंतजाम करना जरूरी नहीं समझतीं। हालांकि बरसात के दौरान मुश्किल केवल शहरी इलाकों में भयानक बाढ़ जैसे हालात खड़े होने की ही नहीं होती, बल्कि बिजली गिरने, पानी में करंट फैलने आदि से भी मौतें होती हैं, लेकिन अगर सिर्फ पानी की सहज निकासी की व्यवस्था को दुरुस्त कर लिया जाए तो ऐसी आपदाओं के दौरान आधी से ज्यादा समस्याओं को नियंत्रण में लाया जा सकता है।

निगरानी का सवाल

मुंबई स्थित पंजाब एंड महाराष्ट्र सहकारी बैंक (पीएमसी बैंक) में घोटाले और अनियमितताओं की परतें अब जिस तरह से खुल रही हैं, उससे ज्यादा हैरानी इसलिए नहीं होनी चाहिए कि भारत की बैंकिंग प्रणाली की असल तस्वीर यही है। ऐसा कोई पहली बार नहीं हुआ है। लेकिन अब यह साफ हो चुका है कि बड़ी-बड़ी कंपनियां कर्ज डकार कर बैंकों को खोखला बना रही हैं और आम जनता की गाढ़ी कमाई पर मौज कर रही हैं। भारतीय रिजर्व बैंक अगर ईमानदारी से जांच कराए तो पता चलेगा कि ज्यादातर सहकारी बैंकों में इसी तरह के खेल चल रहे हैं। देश में हजारों की संख्या में सहकारी बैंक चल रहे हैं और इनका नियंत्रण राज्य सरकार के हाथ में होता है। सहकारी बैंकों के संचालन में नेताओं के दबदबे और हस्तक्षेप भी जगजाहिर हैं। लेकिन इनका नियामक रिजर्व बैंक है। ऐसे में अगर किसी बैंक में कोई अनियमितता पाई जाती है, जनता के पैसे डूबने का खतरा खड़ा होता है तो उसके लिए रिजर्व बैंक जिम्मेदारी से बच नहीं सकता। भारत में जिस तरह से बैंक घोटाले हो जाते हैं, उससे यह साफ है कि बैंकों पर निगरानी करने वाला तंत्र वाकई बेहद लापरवाह, कमजोर और अक्षम साबित हुआ है।

पीएमसी बैंक में लोगों के जिस तरह से पैसे फंस गए हैं, वह चिंताजनक है। इस बैंक के ग्राहकों में बड़ी संख्या तो उन लोगों की है, जिन्होंने जीवनभर की कमाई बैंक में सावधि जमा के रूप में भी जमा की थी। लोगों की पगार, पेंशन सब इसमें जमा होती है, उस इलाके के छोटे दुकानदारों और आवास समितियों के खाते इसमें हैं। पर अब सब बंद हैं। अस्पताल, बच्चों की फीस और रोजमर्रा के खर्च के पैसे पर बैंक ने ताला जड़ दिया है। छह महीने में मात्र दस हजार रुपए निकाल कर लोग कैसे अपना गुजारा कर पाएंगे, यह शायद रिजर्व बैंक ने नहीं सोचा। अब यह खुलासा हुआ है कि बैंक ने सारे नियम-कायदों को ताक पर रखते हुए लोगों का पैसा इस तरह लुटाया और बड़ी संख्या में फर्जी खाते खोल कर कंपनियों के विकास में योगदान किया और रिजर्व बैंक की आंखों में धूल झोंकी।

सहकारी बैंक हों या बड़े सरकारी और निजी बैंक, पिछले कुछ सालों में जिस तरह से इनमें घोटालों और गड़बड़ियों का खुलासा होता रहा है, उसने बैंकिंग व्यवस्था पर लोगों का भरोसा डिगाया है। हाल में एक निजी बैंक के कर्ज देने पर रोक लगा दी गई। इससे लोगों में यह डर बैठना स्वाभाविक है कि कहीं किसी दिन उनके बैंक में भी ऐसा न हो जाए। ऐसे मामलों में समस्या यह होती है कि जब किसी बैंक पर ग्राहकों के धन की निकासी जैसी कठोर पाबंदियां लगा दी जाती हैं तो पैसा लंबे समय तक के लिए अनिश्चितता में फंस जाता है। उस वक्त कोई यह नहीं बता सकता कि अंतिम समाधान कितने महीनों या सालों में होगा और लोगों की फंसी पूंजी कब निकलेगी। रिजर्व बैंक को इस बारे में सोचना चाहिए कि अगर किसी बैंक पर इस तरह की कड़ी कार्रवाई करने की जरूरत है तो पहले यह सुनिश्चित हो कि लोगों के पैसे जब्त न हों। उन्हें रकम निकासी के तुरंत विकल्प दिए जाएं। बैंकों में होने वाली गड़बड़ियां बता रही हैं कि ऑडिट प्रणाली ठप-सी है। पंजाब नेशनल बैंक घोटाले में यही हुआ था और लंबे समय तक उस शाखा का ऑडिट ही नहीं हुआ जो नीरव मोदी और मेहुल चौकसी पर मेहरबान थी। सहकारी बैंकों को लूट से बचाने के लिए रिजर्व बैंक को अपना निगरानी तंत्र मजबूत करने की जरूरत है।

कल्पमेधा

जितना दिखाते हो उससे अधिक तुम्हारे पास
होना चाहिए; जितना जानते हो उससे
कम तुम्हें बोलना चाहिए।
-शेक्सपियर

टीबी से निपटने की चुनौती

अरविंद कुमार सिंह

स्वास्थ्य सेवाओं के इन बदतर हालात के लिए सरकार की नीतियां जिम्मेदार हैं। स्वास्थ्य क्षेत्र को लेकर सजगता और गंभीरता का हमारे नीति-निर्माताओं में घोर अभाव है। पिछले दो दशकों में यह देखने में आया है कि सरकारों ने विभिन्न रोगों की रोकथाम और कल्याणकारी परियोजनाओं के मद में धन की कटौती की है।

यह चिंताजनक है कि देश में टीबी उन्मूलन अभियान के बीच पिछले एक साल में टीबी के साढ़े इक्कीस लाख नए मरीजों की पहचान हुई है। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की ताजा रिपोर्ट में कहा गया है कि इन मरीजों में बीस फीसद मरीज देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में हैं। उत्तर प्रदेश के अलावा महाराष्ट्र में दस फीसद, राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात में सात-सात फीसद और तमिलनाडु, बिहार और पश्चिम बंगाल में पांच-पांच फीसद पाए गए हैं। गौर करें तो इन मरीजों में नवासी फीसद की आयु पंद्रह से उनहत्तर वर्ष के बीच है। इनमें महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों की संख्या सबसे ज्यादा है। हाल ही में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत से टीबी के खात्मे की समयसीमा विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लूएचओ) की समयसीमा वर्ष 2030 से पांच साल पहले यानी 2025 तक की तय की। लेकिन मौजूदा हालात को देखते हुए यह कह पाना मुश्किल है कि 2025 तक इस लक्ष्य को साधा जा सकेगा। ऐसा इसलिए है कि भारत दुनिया में टीबी के मरीजों का सबसे बड़ा केंद्र बनता जा रहा है। टीबी मरीजों की संख्या कम होने के बजाय बढ़ती जा रही है। अगर इस साल के आंकड़ों को शामिल कर लिया जाए तो भारत में टीबी मरीजों की तादाद पैंतीस लाख से ऊपर पहुंच चुकी है। गौर करने लायक बात यह है कि एक ओर भारत ने 2025 तक टीबी पर नियंत्रण पाने का लक्ष्य सुनिश्चित किया है और इसमें विश्व स्वास्थ्य संगठन मदद कर रहा है, वहीं दूसरी ओर टीबी के मरीजों की बढ़ती संख्या यह रेखांकित करती है कि टीबी से निपटने की चुनौती जस की तस बनी हुई है।

केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की रिपोर्ट से इतर विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़े भी यही बता रहे हैं कि भारत में टीबी के मरीजों की संख्या हर साल बढ़ रही है और साथ ही इस रोग से मरने वालों की संख्या में भी इजाफा हो रहा है। 2015 में भारत में टीबी के अट्ठाईस लाख मामले आए थे और उस साल इस बीमारी से करीब पांच लाख लोगों की मौत हुई थी। समस्या यह है कि भारत में टीबी के ज्यादातर मामले तो दर्ज भी नहीं होते हैं। दर्ज नहीं होने वाले मामलों में विश्व में हर चौथा मामला भारत का होता है। वर्ष 2013 में दुनिया के दस देशों में तकरीबन चौबीस लाख टीबी के मामले दर्ज ही नहीं हुए थे, जिनमें सर्वाधिक संख्या भारतीयों की थी।

दरअसल, भारत में टीबी रोग में वृद्धि का मूल कारण जागरूकता की कमी और उचित इलाज का अभाव है। उसी का नतीजा है कि भारत में टीबी के मरीजों की संख्या में इजाफा हो रहा है। टीबी माइक्रोबैक्टीरियम टुबरक्लोरसिस नामक जीवाणु के कारण होती है। भारत में हर वर्ष तीन लाख से अधिक लोगों को टीबी के कारण मौत के मुंह में जाना पड़ता है। टीबी का फैलाव इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति द्वारा लिए जाने वाले श्वास-प्रश्वास के द्वारा होता है। केवल एक रोगी पूरे वर्ष के दौरान दस से भी अधिक लोगों को संक्रमित कर सकता है। यह बीमारी प्रमुख रूप से फेफड़ों को प्रभावित करती है। लेकिन, अगर इसका समय रहते उपचार न कराया जाए तो यह रक्त के द्वारा शरीर के दूसरे भागों में भी फैल कर उन्हें संक्रमित करती है। ऐसे संक्रमण को द्वितीय संक्रमण कहा जाता है। यह संक्रमण किडनी, डिंब वाही नलियों, गर्भाशय और मस्तिष्क को प्रभावित कर सकता है। टीबी महिलाओं के लिए गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। टीबी केवल महिलाओं में बांझपन का कारण ही नहीं बनती, पुरुष भी इससे बुरी तरह प्रभावित होते हैं। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह कि इसके लक्षण तत्काल दिखाई नहीं देते हैं और लक्षण दिखाई देने तक ये प्रजनन क्षमता को पहले ही नुकसान पहुंचा चुके होते हैं। आंकड़े बताते हैं कि टीबी से पीड़ित हर दस महिलाओं में से दो गर्भधारण नहीं कर पाती हैं। अधिकतर वही लोग इसकी चपेट में आते हैं जिनकी रोग-प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होती है और जो संक्रमित व्यक्ति के संपर्क में आते हैं। जब संक्रमित व्यक्ति खांसता या छींकता है तब बैक्टीरिया वायु में फैल जाते हैं और जब हम सांस लेते हैं तो ये हमारे फेफड़ों में पहुंच जाते हैं।

महिलाओं के साथ बच्चों के लिए भी टीबी एक बहुत बड़ा खतरा है। बच्चों के कुछ समूह अन्य लोगों की तुलना में टीबी के दायरे में ज्यादा होते हैं।

ऐसे में आवश्यक हो जाता है कि टीबी की जद में आने वाले बच्चों के लिए तत्काल इलाज की व्यवस्था की जाए। बीसीजी का टीका बच्चों में टीबी के उपचार में काफी हद तक कारगर साबित हो रहा है। आमतौर पर टीबी के साधारण लक्षण होते हैं जिनकी आसानी से पहचान की जा सकती है। तीन सप्ताह से अधिक समय से खांसी या थूक के साथ खून आए तो सतर्क हो जाना चाहिए। टीबी की जद में आने वाले व्यक्ति को अक्सर रात में बुखार आता है और धीरे-धीरे उसका वजन कम होता जाता है। भूख भी नहीं लगती है और शरीर कमजोर होता चला जाता है। अगर ऐसा कुछ लक्षण दिखे तो तत्काल डॉक्टर से परामर्श लेकर उचित इलाज होना चाहिए।

यह विडंबना है कि भारत में टीबी के नियंत्रण के लिए कई योजनाएं चल रही हैं, लेकिन इस जानलेवा बीमारी ने एड्स को भी पीछे छोड़ दिया है। विशेषज्ञों का कहना है कि गरीबी, कुपोषण, सरकारी अस्पतालों में डॉक्टरों और दवाओं की कमी और सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं के लिए धन की कमी इस जानलेवा बीमारी पर नियंत्रण लगाने की राह में सबसे बड़ी बाधा बन रही है। नतीजतन, टीबी के खिलाफ लड़ाई कमजोर पड़ रही है। भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली की दशा कितनी दयनीय है, यह किसी से छिपा नहीं है। कस्बों और शहरों में तो अस्पताल, नर्सिंग होम, डॉक्टर और दवा उपलब्ध हैं, लेकिन गांवों की हालत बेहद खस्ता है। यहां न तो डॉक्टर हैं और न ही अस्पताल। भला ऐसे में टीबी पीड़ित मरीजों का इलाज कैसे होगा, यह गंभीर सवाल है।

स्वास्थ्य सेवाओं के इन बदतर हालात के लिए सरकार की नीतियां जिम्मेदार हैं। स्वास्थ्य क्षेत्र को लेकर सजगता और गंभीरता का हमारे नीति-निर्माताओं में घोर अभाव है। पिछले दो दशकों में यह देखने में आया है कि सरकारों ने विभिन्न रोगों की रोकथाम और कल्याणकारी परियोजनाओं के मद में धन की कटौती की है। आंकड़ों पर गौर करें तो केंद्र सरकार ने वर्ष 2012 से 2015 के दौरान टीबी पर नियंत्रण लगाने से संबंधित परियोजनाओं के लिए सिर्फ 24.30 करोड़ डॉलर की रकम जारी की थी, जबकि संबंधित संस्थाओं ने इन योजनाओं को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए कम से कम तियालीस करोड़ डॉलर की मांग की थी। अगले दो वर्षों का भी हाल कमोबेश ऐसा ही रहा। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि सत्तारूढ़ राजनीतिक पार्टियां चुनाव अभियान में जितनी रकम खर्च कर देती हैं, अगर उसका एक हिस्सा भी टीबी पर नियंत्रण की योजनाओं में लगाया जाए तो टीबी के विरुद्ध जंग को फतह किया जा सकता है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों की मानें तो सरकार को दूसरे गैर-जरूरी खर्चों में कटौती करके सार्वजनिक स्वास्थ्य से संबंधित परियोजनाओं को पर्याप्त धन मुहैया कराना चाहिए। इसलिए और भी कि धन की कमी की वजह से टीबी से आधी-अधूरी लड़ाई लड़ी जा रही है, जो बेहद खतरनाक है और इसका खमियाजा देश की भावी पीढ़ी को भुगतना पड़ रहा है। उचित होगा कि भारत सरकार टीबी पर प्रभावी नियंत्रण के लिए ठोस योजना तैयार करे और विश्व स्वास्थ्य संगठन सहित अन्य निजी संगठनों की मदद ले।

आधा-आधा कुआं

संजीव राय

दुनिया मेरे आगे

अबकी बार गांव गया तो देखा कि बचपन में जिस कुएं का पानी हम पीते थे और अक्सर जहां नहाते थे, अब उसमें पानी नहीं है। दरअसल, यह पक्का कुआं काफी गहरा था और इस कुएं ने बचपन में हमें ही नहीं आस-पड़ोस और माता-पिता, चाचा-चाची, भैया-भाभी, रिश्तेदार-नातेदार सबको पानी दिया है। इसका पानी इतना ठंडा था कि 1970-1980 के दशक में हमारे टोले में जब भी शादी-ब्याह होता, पीतल की गगरी से पानी निकाला जाता और उसी से मेहमानों-बारातियों के लिए शरबत बनता। तब तक गांव में ठंडे पेय यानी कोल्ड ड्रिंक्स और बर्फ की सिल्ली नहीं आती थी।

दुनिया में कुएं का इतिहास कोई आठ हजार साल पुराना है। पहले कुएं, खेतों के आसपास ही बनाए जाते थे। मौजूदा समय में इजराइल में सबसे पुराने कुएं का पता चला है जो 7500-8000 साल पहले का है। हम सबके पुरखे, पहले नदी-तालाब-पोखरे से पानी पीते थे। फिर कुएं बनाए जाने लगे। उन्नीसवीं शताब्दी के शुरुआती वर्षों तक लकड़ी की मदद से खुदाई करके कुएं बनाने की तकनीक प्रयोग में थी। कुएं खुदवाना एक पुण्य का काम समझा गया, इसीलिए कई राजाओं ने सरेराह कुएं और बाबड़ी खुदवाए। राजस्थान के अभनेरी में नौवीं शताब्दी में बनी चांद बावड़ी बहुत प्रसिद्ध है। इसमें पानी तक जाने के लिए सीढ़ियां बनी हैं। यह चौंसठ फुट गहरी है और कहा जाता है कि भारत की यह सबसे गहरी और विशाल बावड़ी है, जिसमें तेरह मंजिल हैं। बढ़ती मांग ने कुएं-बावड़ी की खुदाई की तकनीक में लगातार सुधार किया। बीसवीं सदी में लोहे की आधुनिक मशीनों से कुएं-बावड़ी की खुदाई का काम शुरू हो गया, लेकिन अब कुएं खत्म होते जा रहे हैं।

सात-आठ साल पहले गांव के कुएं से जोड़ कर एक हैंडपंप लगा दिया गया था। राह चलते लोग भी आसानी से यहां पानी पी लेते थे। दरअसल, यह कुआं दो परिवारों की जमीन में आधा-आधा पड़ता है तो आधा-आधा बंट गया। अब हैंडपंप उखड़ चुका है। कुएं के आधे हिस्से को नए बने मकान ने ढक लिया है। संयुक्त परिवारों के विभाजन ने हमारे गांव में ही कई कुओं को समाप्त कर दिया। देश भर में कुओं की संख्या ऐसे ही घटती जा रही है, लेकिन उत्तरी कर्नाटक, मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात में अभी भी कुएं की महत्ता अधिक है। मेरे गांव में कई कुएं खत्म हो चुके हैं तो कुछ को इस हाल में छोड़ दिया गया है कि वे किसी काम के नहीं रहे।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में 1990 के दशक में पहले घरों में हैंडपंप आए और फिर बिजली आने के बाद टंकी और जेट पंप लगने लगे। हमारे इलाके और गांव में ज्यादा पानी बटोर कर रखने का चलन नहीं था, लेकिन अब गांव में लोग छत पर प्लास्टिक की टंकी रखने लगे हैं। जो कुआं पानी से लबालब भरा रहता था, धीरे-धीरे उसका पानी नीचे जाने लगा। लोग बिजली की मोटर की मदद से ट्यूबवेल और कुएं से पानी खींचने लगे! नौजवानों को नहीं पता चला कि कुआं भी बूढ़ा हो रहा है। कुएं के साथी, पीतल वाली गगरी और डोरी तो कब के चले गए। शायद ही किसी घर में पुराने गगरा-गगरी मिलें! अपने ही गांव में बाबा-आजी, काका-माई,अम्मा - पिताजी, घुरपत्तर कितने लोग स्मृति के पन्नों में समाहित हो गए। ऐसे में यह कुआं मेरे भरोसे और पुरखों की याद दिलाता हुआ अभी भी वहां खड़ा है।

यह कुआं कम से कम सौ साल पहले बना हुआ था। बाद में इसके किनारे गोलाई में पक्का चबूतरा बना। लोग इस चबूतरे पर बैठ कर बातें करते, नहाते, कपड़े और अनाज सुखाते। अब कुएं की जगह मोटर और पानी की टंकी आ गए हैं। कुछ लोग गैलन का पानी खरीद कर पी रहे हैं। शादी-ब्याह और भोज में अब बोतल का पानी चलने लगा है। पुराने लोग, जिनके साथ कुएं का दाना-पानी, हल-बैल, गीत-गंवई के संबंध रहे हैं, उनमें से अधिकतर लोग गुजर गए। जो बुजुर्ग अभी भी मौजूद हैं, वे दुखी और लाचार हैं कि उनकी कोई नहीं सुनता। गांव में रह रहे मेरे एक भतीजे ने बताया कि आसपास के लोग कुएं में कूड़ा फेंकते हैं। जब मैंने झांक कर देखा तो कुएं में पानी नहीं दिखा। कूड़े का ढेर काफी ऊपर आ चुका था।

उसी दिन मुझे दिल्ली वापस आना था। ज्यादा समय नहीं था वहां रुकने के लिए। मेरे भीतर कुछ अजीब-सा महसूस हुआ। मेरे कानों में छपाक-छपाक कुछ बजने लगा, जैसे गगरी कुएं में पहुंच गई हो और कुआं यानी 'इनार' कह रहा हो- 'हम तो आपके कंधे से लिपट कर, रोकर अपना मन हल्का कर लेना चाहते हैं, क्योंकि आप बहुत दिनों के बाद आते हैं और शायद आप जब अगली बार आएं, तो मेरा कोई निशान ही यहां नहीं मिले।' सुविधाएं कैसे किसी समाज को इतना लापरवाह बना देती हैं कि वह उन बुनियाद को भी खत्म करने से नहीं हिचकता, जिन पर उसका जीवन टिका रहा।

प्लास्टिक से आजादी

प्रधानमंत्री ने देशवासियों से अपील की है कि वे महात्मा गांधी की 150वीं जयंती को भारत को प्लास्टिक मुक्त बनाने के दिवस के रूप में मनाएं। साथ ही उन्होंने नगर निकायों, गैर सरकारी संगठनों और कारपोरेट सेक्टर का आह्वान किया कि वह प्लास्टिक कचरे का दिवाली से पहले निस्तारण करने के लिए आगे आए। उन्होंने स्वतंत्रता दिवस पर भी देशवासियों से एक ही बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक का प्रयोग बंद करने का आह्वान किया था। केंद्र सरकार का प्लास्टिक से निपटने का यह प्रयास प्रशंसनीय ही नहीं सराहनीय भी है। असलियत यह है कि प्लास्टिक कचरे की समस्या से आज समूचा विश्व जूझ रहा है। इससे मानव ही नहीं बल्कि समूचा जीव-जंतु एवं पक्षी जगत तक प्रभावित है। यदि इस समस्या पर शीघ्र ही अंकुश नहीं लगाया गया तो आने वाले समय में स्थिति और विकराल हो जाएगी और तब इससे निपटना असंभव हो जाएगा।

गौरतलब है कि हमारे देश में हर साल 56 लाख टन प्लास्टिक कचरा निकलता है जिसमें से सिर्फ नौ हजार टन पुनर्चक्रित (रिसाइकिल) हो पाता है। यही नहीं, छह हजार टन प्लास्टिक हर साल फेंका जाता है जो अंत में समुद्र में जाकर मिल जाता है। इससे समुद्री जीव-जंतुओं का जीवन संकट में आ जाता है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार देश के अकेले चार महानगरों में से दिल्ली में 690 टन, चेन्नई में 429 टन, कोलकाता में 426 टन और मुंबई में 408 टन प्लास्टिक कचरा हर रोज फेंका जाता है जो कई सालों तक पर्यावरण में मौजूद रहता है।

प्लास्टिक से निपटने के मामले में हमारा देश बांग्लादेश, आयरलैंड, आस्ट्रेलिया और फ्रांस से भी पीछे है। बांग्लादेश ने तो अपने यहां 2002 में ही प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगा दिया था। कारण, वहां के नाले प्लास्टिक के चलते जाम हो गए थे। आयरलैंड ने प्लास्टिक बैग के इस्तेमाल पर अपने यहां 90 फीसद तक टैक्स लगा दिया है। ऑस्ट्रेलिया सरकार ने अपने नागरिकों से स्वेच्छा पूर्वक प्लास्टिक के इस्तेमाल में कमी लाने की अपील की। नतीजतन, वहां इसके इस्तेमाल में 90 फीसद की कमी आ गई। फ्रांस ने अपने यहां इसके इस्तेमाल पर 2002 से पाबंदी लगाने का काम शुरू किया जो 2010 तक पूरा हो गया। देर से ही सही, हमारी सरकार ने भी प्लास्टिक पर रोक लगाने पर विचार किया लेकिन इस अभियान में आम लोगों का सहयोग बेहद जरूरी है। लोगों को समझना होगा कि प्लास्टिक का इस्तेमाल हमें कुछ पलों के लिए सहूलियत जरूर देता है। लेकिन कुछ पलों की सहूलियत भविष्य के लिए बड़ा संकट है।

● *रोहित यादव, महर्षि दयानंद विवि, रोहतक*

आतंक पर प्रहार

संयुक्त राष्ट्र महासभा के मंच से हमारे प्रधानमंत्री ने आतंकवाद पर न सिर्फ करारा प्रहार किया, बल्कि इसे प्रश्रय देने वालों की भी खिंचाई की। 2014 के पहले कोई देश आतंकवाद पर हमारी बातें सुनने के लिए तैयार नहीं होता था, खासकर अमेरिका। लेकिन यह मौजूदा प्रधानमंत्री के नेतृत्व का ही कमाल है कि आज सिर्फ अमेरिका नहीं बल्कि दुनिया भर के ज्यादातर देश हमारी बातें सुन रहे हैं और भारत का समर्थन भी कर रहे हैं। प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान से जंग किए बिना ही उसकी हालत इतनी खराब कर दी है कि सिर्फ चीन को छोड़कर कोई अन्य बड़ा और प्रभावशाली देश उसकी सुनने को भी तैयार नहीं है, खासकर मुसलिम देश।

● *राम मूरत 'राही', सूर्यदेव नगर, इंदौर*

सुरक्षा का सफर

भारतीय रेलवे दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा नेटवर्क है। इससे औसतन रोजाना 2.3 करोड़ यात्री सफर करते हैं जो आस्ट्रेलिया जैसे देशों की जनसंख्या के लगभग बराबर है, अर्थात प्रतिदिन एक ऑस्ट्रेलिया भारत की ट्रेनों में रहता है। लेकिन क्या यह सफर पूरी तरह सुरक्षित है? हम सभी बगैर हकीकत को जाने-समझे 'मंगलमय यात्रा' की कामना करते हैं, लेकिन किसी अनहोनी से यात्रियों का विश्वास टूट जाता है। लगातार हादसों के बाद जांच समिति के गठन के बाद, बगैर हादसे की वजह की जांच के रेलगाड़ियां पुनः पटरी पर दौड़ने लगती हैं, और हादसे होते रहते हैं। कई लोको पायलट अपने केबिन में उच्च-स्तरीय सुविधाओं के अभाव में एक हाथ में छाता और दूसरे हाथ में रेल का संचालन बारिश के मौसम में करते देखे गए।

क्या यह यात्रा सुरक्षित है? कई ट्रेनों के इंजन में बरसात का पानी घुस जाता है। कभी आग तो कभी करंट लगने की आशंका बनी रहती है। कई इंजन खराब पड़े हैं, जिन्हें जल्दी ठीक करना होगा और ऐसे इंजन जो पूरी तरह खराब हैं उन्हें सेवा मुक्त कर देना होगा। बड़ी संख्या में असामाजिक तत्त्व रेलगाड़ियों में आपराधिक वारदातों को अंजाम देते हैं। इसे रोकने के लिए रेलवे पुलिस और संपूर्ण रेल विभाग को यात्रियों की सुरक्षा को वरीयता देते हुए कठोर कदम उठाने होंगे और विशेष रणनीति के तहत कार्य करना होगा।

उम्मीद है कि सरकार रेल विभाग को और बेहतर बनाने के तमाम छोटे-बड़े प्रयास करेगी ताकि आने वाले समय में भारतीय रेल दुनिया का सबसे बड़ा होने के साथ सबसे सुरक्षित्नेटवर्क भी कहा जा सके।

● *कपिल एम.वड़ियार, उत्तर पश्चिम रेलवे, जोधपुर*

सुधार का इंतजार

सरकार को बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निवेश के लिए खजाने का मुंह खोलना होगा। यह इसलिए जरूरी है ताकि इस निवेश का असर चालू वित्त वर्ष में ही महसूस हो और मंदी पर काबू पाया जा सके। यदि लगे तो राजकोषीय अनुशासन के मामले में कुछ छूट ली जा सकती है, लेकिन यह केवल बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निवेश की शर्त पर हो। वैसे भी यह क्षेत्र शिद्दत से सुधार का इंतजार कर रहा है और इसमें अर्थव्यवस्था को व्यापक रूप से फायदा पहुंचाने की बहुत संभावनाएं हैं।

प्रधानमंत्री को संवाद स्थापित करने की कला में महारत हासिल है। अपने इस कौशल का उपयोग उन्हें सभी क्षेत्रों के उद्यमियों और निवेशकों का प्रत्येक मोर्चे पर हौसला बढ़ाने में करना होगा। उन्हें 'आधुनिक भारत का सपना' इस तबके के बीच लोकप्रिय बनाना होगा। इस साल पंद्रह अगस्त को उन्होंने लालकिले की प्राचीर से कहा था कि संपत्ति सृजित करने वालों का सम्मान करना चाहिए। प्रधानमंत्री को यह आश्वस्त करना होगा कि वास्तविक गलतियां और नुकसान स्वीकार्य होंगे और कानूनी ढंग से कमाई स्वागतयोग्य है।

● *हेमंत कुमार, गोराडीह, भागलपुर*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com